International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197
Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2017; Page No. 730-731

वर्तमान संदर्भ में स्त्री अस्मिताः एक विमर्श

डॉ0 नीतू शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी, ईसाबेला थोबर्न कॉलेज, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

इक्कीसवीं सदी के प्रारम्भ में स्त्री विमर्श समाज के साथ–साथ साहित्य में एक विशेष प्रवृत्ति बन कर उभरा है। नस्लवाद, उपनिवेशवाद, दासप्रथा के विरोध के साथ ही साथ नारी मुक्ति आन्दोलन भी शुरू हुआ। नारी मुक्ति आन्दोलन वास्तव में अभिव्यक्ति और निर्णय की स्वतन्त्रता का आन्दोलन है, समाज में भागीदारी का आन्दोलन है, जिससे नारी को सदियों से वंचित रखा गया था। अपवाद स्वरूप स्त्रियाँ शासक भी बनी, राज–काज भी सम्भाले और उन्होंने वीरता के प्रतिमान भी स्थापित किये, पर ये कतिपय दृष्टान्त ही हैं।

उद्देश्य

लोकतन्त्र आने के बाद ही जब आम आदमी के विकास की मुहिम शुरू हुई तो औरत के पहचान का प्रश्न भी उठा और शुरू हुई अभिव्यक्ति की ताकत के साथ–साथ अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता की लड़ाई। साहित्य में भी लेखिकाओं ने अपनी रचनाओं में इन तथ्यों को उभारा है और समाज को सोचने के लिए प्रेरित किया है। हिन्दी लेखिकाओं की दृष्टि में स्त्री–विमर्श का मूल स्वर सदियों से पुरूषवादी 'गुलामी एवं शोषण' के विरूद्ध अपनी सामाजिक समानता न्याय, अस्मिता, मुक्ति स्वतन्त्रता एवं अधिकारों का स्वर है।''पितृसत्तात्मक समाज की स्त्री विरोधी परम्पराओं का आयाम पूरी तरह विशिष्ट है। ये परम्पराएं स्त्री को घर सौंपती हैं, बच्चों का भरण पोषण सौपती है। मानवता के नाम वृद्ध और बीमारों के लिए उससे निःशुल्क सेवा लेती है। और बदले में उसके द्वारा की गई सेवाओं का महिमा मंडन कर अपने कर्तव्यों की इतिश्री कर लेता है। स्त्री भूखी है या मर रही है इसकी चिंता किसी को नहीं होती।''[1] भूमण्डलीकरण के दौर में स्त्री की अस्मिता पर प्रभा खेतान कहती है कि ''भूमण्डलीकरण ने स्त्री को जहाँ लाभ पहुँचाया है वहीं हानि भी। उसने स्त्री को एक आकर्षक उत्पाद में बदला हैं। आज भ्रूण–हत्या और बालिका–शिशु की उपेक्षा का अनुपात तेजी से बढ़ा हैं।

भारत जैसे समाज में स्त्री की आर्थिक स्वतन्त्रता ही काफी नही हैं। आर्थिक परिवर्तन के सन्दर्भ में उसे राजनीतिक और सामाजिक आन्दोलन की आवश्यकता है।'' वे लिखती है – ''अमानवीय विकास के प्रतिमानों को खारिज करना और जनोन्मुख नजरिए को विकसित करना नारीवाद का पहला उद्देश्य होना चाहिए।''स्त्री लेखक पर केन्द्रित स्त्री विमर्श हिन्दी साहित्य में आधुनिक अवधारणा हैं आज लेखिकाओं ने अपनी पहचान बनाई है उनमें प्रभा खेतान, निर्मला जैन, राजी सेठ, ममता कालिया, मैत्रेयी पुष्पा, कात्यायनी, उषा प्रियंवदा, अलका सरावगी, आदि महिला लेखिकाओं ने स्त्री की अस्मिता और उसके अधिकारों के प्रति कलम उठाई है। निश्चय ही यह कथा स्वभाव लेखिकाओं की प्रगतिशील सोच से उत्सर्जित हैं। इसका कारण यही है कि वे किसी पूर्वाग्रह से नहीं लिखती, न ही किसी सैद्धान्तिक पूर्वाग्रह से, न ही किसी नैतिक पूर्वाग्रह से, उनके पास जीवन के विपुल अनुभव है। जहाँ सामाजिक संस्थाओं एवं सम्बन्धों के दबाव से ऊपर उठ कर एक जीवन्त प्राणी के रूप में स्त्री को अपने बारे में सोचने की आवश्यकता और अवकाश पाना है। मृणाल पाण्डे स्त्री अस्मिता पर कहती हैं कि ''स्त्री उत्पाद में ढ़ल और बदल रही हैं वे लिखती है 'उदित भारत' का मध्यवर्गीय समाज और उसकी महिलाएं आत्मकेन्द्रित और वृहत्तर सामाजिक सच्चाइयों की ओर जिस तेजी से लापरवाह होती जा रही है वह स्वस्थ नहीं है। आज की प्रौढ़ हो चली महिला नारीवादियों ने जब स्त्रियों को अपनी देह और अपने जीवन पर अधिकार दिलाने के लिए आन्दोलन किया था तो इस इच्छा से नहीं कि उस आजादी का विलय पुरूषों के प्रति हिकारत भरे स्वामित्व में हो जाए।''[3] इसके लिए बस एक ही रास्ता है कि स्त्री स्वयं सामने आये, उसे स्वयं से ही लड़ना होगा, स्वयं नेतृत्व भी करना होगा।

स्त्री यदि पुरूष के समान अधिकार पाना चाहती है तो उसे छुईमुई, नाजुक, त्यागमयी, तपस्विनी और साध्वी की भंगिमा तोड़कर स्त्री शुचिता पतिव्रता की मानसिकता त्यागकर और उपभोक्ता सामग्री से बाजार में बिकाऊ वस्तु की तरह चकाचौंध भरी मोहक दुनिया नकार कर एक मेहनतकश अन्याय न सहने वाली, स्वावलम्बी, स्वतंत्र एवं आत्म निर्भर और अपने जनतांत्रिक अधिकारों का उपभोग करने वाली स्त्री की भूमिका अदा करनी होगी। न देवी की, न दासी की–बस एक साथी, एक दोस्त, एक सहयात्री, एक सहयोगी और समझदार जिम्मेदार नागरिक की आकांक्षा पालनी होगी। स्त्री दृष्टि का महत्व प्रतिष्ठित करना होगा जो मनु की संहिता नही, मानवीय संहिता की प्रतिपादक होगी। उर्दू में इस्मत चुगतई ने ''लिहाफ'' जैसी कहानियों में मुस्लिम परिवारों की स्त्रियों को यौन वर्जनाओं से मुक्ति की तरकीबे निकालते दिखाकर औरत को जीवित इन्सान साबित करने की चेष्टा की थी। तसलीमा नसरीन ने मुस्लिम स्त्रियों की मुक्ति के लिए जोखिम सहकर सवाल उठाये और ''लज्जा'' तथा ''औरत होने के कारण'' पुस्तकों में बेबाकी से धर्म मजहब की रूढ़िवादिता पर सच्चाई से लिखा और औरत की अस्मिता को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक नई पहचान दी।

हिन्दी में कृष्णा सोबती ने ''मित्रों मरजानी'', ''जिन्दगीनामा'', ''दिलो दानिश'' ''ऐ लड़की'' की सृजन यात्रा में बेड़ियो को तोड़ती मुक्त होती औरतों की कथा लिखकर 19वीं सदी से 20वीं सदी के अन्तिम दशक तक की स्त्री अस्मिता को मुखरित किया है। तो अमृता प्रीतम ने आत्म कथायें लिखकर औरत का नया बेबाक रूप प्रस्तुत किया। जो सत्य कहने से नहीं डरती खुद अपने जीवन को एक खुली किताब के समान जीती है। इसके बाद अरूंधती राय ने भी बड़े घरों की औरतों के शोषण की कथा कही है। प्रभा खेतान की कई कहानियों और उपन्यासों में भारत के बाहर और भारत के अन्दर के कई समुदायों विशेषकर मारवाड़ी समुदाय के घरों की स्त्रियों के शोषण, उनके संघर्ष, जिजीविषा और मुक्ति की कथा है। उनके

''छिन्नमस्ता'' उपन्यास में परिवार के रिश्ते भी बेमानी हो जाते है–वे केवल स्वार्थी ही नही रहते बल्कि टूटते है और पुरूष का वहशीपन रिश्तों की मर्यादा खत्म कर देता है, चाहे वह बहन का रिश्ता हो या किसी और का। सुशीला टाकभौरे ने कुछ कहानी में दलित स्त्रियों को लेकर लिखा है। ये कथायें दलित आदिवासी, सर्वहारा और कमाने खटने वाली औरतों के जीवन पर आधारित है। ये स्त्री पात्रों के अस्मिता संघर्ष की कहानियाँ और उपन्यास है जो विपरीत स्थितियों में जूझती है–जिजीविषा से भरी है–पर झुकती नही है।

मैत्रेयी पुष्पा ने भी गांव के आम लोगों के बीच से नायक, नायिकायें चुनी है। उनकी नायिकायें मध्य वर्गीय ग्रामीणों के अस्मिता का विकास करती है। जिनके पास बड़े परिवार, बड़ी शिक्षा नही पर जीने की इच्छा है, स्वयं निर्णय का दम और हौसला है। इस बिन्दु पर मैत्रेयी के उपन्यास भारत की ग्रामीण स्त्रियों से जूझते है। लेखिका का ''सीता'' व ''मौसी'' उपन्यास कोयला खदान की कमाने खटने वाली औरतों पर केन्द्रित है। मैत्रेयी पुष्पा अपने उपन्यासों में जहां गांव की औरतों की अस्मिता के विकास में कई चरित्र खड़े कर दिये है जिनमें 'सीता' और 'मौसी' के साथ–साथ 'प्यारी' 'परबतिया' 'चम्पा' और 'ललिता' जैसी जुझारू दलित आदिवासी मजदूर स्त्रियां भी है जो अस्मिता के लिये संघर्ष करती है, डरती नही और पुरूष के सहारे परजीवी बनकर जीने से इंकार करती है। असल में त्रासदी की शुरूआत अंतर्विरोधो से भरपूर इन्हीं विशेषणों से हुई है जो स्त्री से उसकी मानवीय इयत्ता छीन पुरूष की मनोदृष्टि से देखी जाने वाली वस्तु बना देती है – अभीप्सित और घृणास्पद। जहाँ हरदीप जैसे पति दो स्पष्ट घोषणा करते पाये जाते है कि – "आऐ तुम जनानियों को मर्दो की बातों में दखल नहीं देना चाहिए। तुम अपना घर संभालों .... बस पैसे कमाना हम मर्दो का काम है। अपने समग्र रूप में ये कहानियाँ पुरूष समाज की इसी इकहरी रूग्ण यादृच्छिक प्रवृत्ति का पुरजोर विरोध हैं तो सूक्ष्म व्यंजना में नारी की मानवीय अस्मिता की सामाजिक–सांस्कृतिक माँग भी। 'अपराध बोध का प्रेत' की सुरभि कैंसर से पीड़ित है, रेडियेशन, कीमोथिरेपी और मौत के डर के बावजूद प्यार की पराकाष्ठा है सुरभि। 'सुरभि अच्छी पत्नी भी है, अच्छी माँ भी है, अच्छी मित्र भी है अच्छी लेखक भी है।' परिवार और अपनी बच्ची की देखभाल के लिए वो अपना कैरियर भी दॉव पर लगा देती है, अन्त में सुरभि लम्बी बीमारी के चलते प्राण तयाग देती है यहाँ मौत तो सिर्फ सुरभि की नहीं नारी की अस्मिता की भी है। त्याग, आदर्श, और प्रेम की मूर्ति बनी सुरभि लेखिका होते हुए भी अपनी पहचान इसलिए नहीं बना पातीं क्यांकि आर्थिक स्वावलम्बन के अभाव में नारी अपने ही घर–परिवार में शोषित होती रही है क्योंकि विरोध करने का न उसमें साहस है और न ही सम्बल। नारी पुरूष के लिए समाज ने जो भिन्न–भिन्न प्रतिमान निर्धारित कर रखे है उन प्रतिमानों का प्रखर विरोध भी तेजेन्द्र शर्मा की कहानियों में देखने को मिलता है।

'स्त्रियों की लैंगिकता सदा ही एक लुभावना विषय रही है। स्त्री को एक यौन–वस्तु के रूप में देखा जाता है जो दूसरे लैंगिक प्राणियों (पुरूषों) के इस्तेमाल और आस्वादन के लिए है – "विद्रोही स्त्री" – जर्मन ग्रीयर – पृ0 16 प्रकृति ने बनाए है नर और मादा शरीर और प्रकृति ने ही बनाई है वासना। सृष्टि ने उत्पत्ति के लिए ही वासना को जन्म दिया है ..... इंसान में अपने आपको जानवरों से अलग करने के लिए प्रेम जैसी कोमल भावना का आविष्कार किया है" (पृ0 86) एक बार फिर होली आज के इस उपभोक्तावादी दौर में प्रेम जैसे उच्च मानवीय भाव का अर्थ भी बदल गया है।

जो एक तरह की विडम्बना है। अपने वतन हिन्दुस्तान की खुशबू मन में बसाए नजमा पाकिस्तान की सरजमी पर भेज दी जाती है। विवाह बंधन में जकड़ी होने पर अपने वतन का नाम लेना भी उसके लिए पाप था उसे हमेशा सुनने को मिलता – "नजमा बेटी, तू काफिरों जैसी बातें क्यों करती है। अगर कहीं इमरान के कानों में ये बात पड़ गयी तो गजब हो जाएगा अब तू शादी करके यहाँ आ गयी है बेटी, अपने आपको यहाँ के रस्मों–रिवाज में ढाल मेरी बच्ची। तू भूल जा कि तू हिन्दुस्तान से यहाँ आई हैं अब तू इस घर की इज्जत है। इस इज्जत को बनाए रख बेटी।" – जाहिर है यह वह स्थल है जहाँ सामाजिक संस्थाओं एवं संबंधो के दबाव से ऊपर उठ कर एक जीवंत प्राणी के रूप में स्त्री को अपने बारे में सोंचने की आवश्यकता और अवकाश पाना है। यहाँ उभरा सवाल उसे एक ओर विवाह संस्था का पुनर्मल्यांकन करने की सामर्थ्य देता है – "मुहाजिरों से गई गुजरी"। यह कहने वाला मेरा अपना शौहर है। नजमा कुछ भी कहने की स्थिति में नहीं थी। पराया देश, पराए लोग। अपना पति भी पराया सा क्यों लगने लगता है। गिद्धों का एक समूह और बेचारी–सी नजमा।" – तेजेन्द्र शर्मा ने इमरान को 'एक बार फिर होली' का नायक नही बनाया। नायकत्व दिया है पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था को जो रचना में देश–काल की सृष्टि भी करती है और उद्देश्य का विस्तार भी। जातीय एवं सांस्कृतिक रक्षा के नाम पर यह व्यवसायी स्त्री को स्त्री बनाने के कर्मकाण्ड में जितने मनोयोग से लिप्त है, उतनी ही उद्धतता एवं प्रचण्डता के साथ स्त्री की हर विद्रोही भंगिमा को कुचलने को आतुर भी। "देखिए बेगम, अल्लाह से डरिए, कुरान–ऐ–पाक भी कहता है कि बीवी को शौहर की बात माननी चाहिए" – (पृ0 80) यह स्थिति नारी को न केवल परवश बनाती है अपितु उसके जीवन को करूणा प्लावित भी करती है। इससे छुटकारा पाने के लिए उसे स्वयं संघर्ष करना पड़ेगा तथा परम्परागत जीवन पद्धति से विद्रोह करना पड़ेगा। अनामिका स्त्री अस्मिता से जुड़ी समस्याओं पर लिखती है कि ''स्त्री आन्दोलन पितृसत्तात्मक व्यवस्था है जो जन्म पूर्वाग्रहों से पुरूष की क्रमिक मुक्ति को असम्भव नही मानती, दोषी पुरूष नही, वह पितृसत्तात्मक व्यवस्था है जो जन्म से लेकर मृत्यु तक पुरूषों को लगातार एक ही पाठ पढ़ाती है कि स्त्रियाँ उनसे हीनतर है। उनके भोग का साधन है।''[4]

निष्कर्ष

स्त्री अस्मिता पर विचारणीय समस्याएं अनेक और अनन्त है। क्या वर्तमान महिला लेखन इन अपेक्षाओं को कमोबेश पूरा करता है। महिला लेखन की अपार सम्भावनाएं है। अनुभव और अभिव्यक्ति, शक्ति और मुक्ति का नया आलेख तब तैयार हो सकेगा जब स्त्री अस्मिता आर्थिक राजनैतिक और मानसिक रूप से आत्मनिर्भर हो और पुरूषों के समान दर्जा प्राप्त कर ले।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. प्रभा खेतान – उपनिवेश में स्त्री – पृ0 14
2. प्रभा खेतान – उपनिवेश में स्त्री – पृ0 35
3. मृणाल पाण्डेय – जहाँ औरतें गढ़ी जाती है – पृ0 62
4. हंस – जनवरी फरवरी – 2000
5. स्त्री विमर्श – रमणिका गुप्ता
6. विद्रोही स्त्री – जर्मेन ग्रीयर
7. शोध सृजन – सं0– बलजीत श्रीवास्तव
8. तेजेन्द्र शर्मा – 'कब्र का मुनाफा'
9. समकालीन सोच – गाजीपुर
10. सृजन संवाद – लखनऊ